



























### राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'

जन्मतिथि मार्गशीर्ष कृष्ण १३ संवत् १९२१ वि०, जन्मस्थान अवधपुर। ये हिन्दी के उन नामी कवियों में थे जिनसे हिन्दी के लिए बहुत कुछ आशा की जा सकती थी लेकिन वसमय में ही इनकी मृत्यु हो जाने से यह आशा फलवती न हो सकी। ये फानपुर के प्रसिद्ध वकील और विद्वान थे। ये कविता ब्रजभाषा में ही करते थे। इनकी लिखी हुई पुस्तकों में चन्द्रफला-भानु-कुमार, धाराधर-धावन नामक नाटक और मेघदूत का हिन्दी पद्यानुवाद प्रसिद्ध है। ये ऊँची धेणी के कवि थे। इनकी कविताओं का एक संप्रद 'पूर्णसंप्रद' के नाम से अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

बं. भगवानदास एम० ए०

जन्म १२ जनवरी सन् १८६९ ई०, निवास-स्थान "विधाम" चुनार, निर्वापुर। बार दर्शन-शास्त्र के पूर्ण पण्डित, अङ्ग्रेजी और हिन्दी के ऊँचे लेखक हैं। भारतीय धर्मशास्त्र पर भी आपका बड़ा गम्भीर अध्ययन है। अङ्ग्रेजी तथा हिन्दी में आपने अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। आपने कुछ कविताएँ भी लिखी हैं जो समय समय पर 'धर्मशास्त्र' में प्रकाशित हुई हैं। हिन्दी से आपका बड़ा अनुराग है। हिन्दी-लेखकों में आप जैसे विद्वान् इतने-गिने हैं, और दर्शन-शास्त्र में तो आपकी धेणी के विद्वान् भारतवर्ष में दो-चार मिलेंगे। आप सम्मेलन के फलकत्ते वाले पचादश अधिवेशन में समापति हो चुके हैं। सम्मेलन के हिन्दी-विद्यापेठ को संस्थापना पदले-पदल आपके द्वारा ही हुई थी। फारो का विद्यापेठ आपके ही परिधन और उद्योग का फल है।

पं० नाथवत्साल मिश्र

निवास-स्थान ऋषभर जिला रोहतक, जन्म संवत् १२२८ वि०। ये 'सुदर्शन' के सम्पादक, हिन्दी के अच्छे लेखक, कवि









चतुर्वेदो पं० रामनारायण मिश्र वं० ९०

जन्म फा० ११ संवत् १९३१, जन्म-स्थान मिर्जापुर। मिश्रजी हिन्दी के पुराने लेखक और कवि हैं। आप प्रतापगढ़, गाज़ीपुर, बाँदा, इटावा, आगरा तथा जौनपुर में तहसीलदार के पद पर रहकर जाज़कल प्रयाग में रहते और सरकार से पेंशन पाते हैं। आपकी लिखी पुस्तकों में अम्यरोप ( काव्य ) शोकाधु, स्वागत-समागत, पंचरात्र का महाप्रपंच, धसंत-पञ्चक, विनय, संगीत-सागर प्रकाशित तथा कामुक, प्रे की कविता, ओज की खोज अप्रकाशित हैं। भारतमित्र, भारत-व्रता, प्रयाग-समाचार, सुधानिधि, राघवेन्द्र, यादवेन्द्र, चतुर्वेदो, अन्युदय तथा मर्यादा में आपके सैकड़ों साहित्यिक लेख प्रकाशित हो चुके हैं। यदि उनका संग्रह अच्छे ढंग से किया जाय तो कई अच्छी पुस्तकें तैयार हो सकती हैं। चतुर्वेदोजी बड़े मृदुभाषी, विनोद-प्रिय, साहित्य-रसिक और सुकवि हैं। जाज़कल आप हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संयुक्त प्रान्तीय प्रचार-संयोजक हैं।

पं० गिरिधर शर्मा “नवरत्न”

जन्म जेष्ठ शुक्ल अष्टमो सं० १९३८ वि०, निवास-स्थान भालरापाटन ( राजपूताना )। नवरत्नजी बड़े अच्छे कवि हैं। आप हिन्दीके सिवा संस्कृत और गुजराती में भी कविता लिखते हैं। इन भाषाओंके अतिरिक्त आपको उर्दू, मराठी, बंगला और प्राकृत का भी अच्छा ज्ञान है। बार के लिखे, अनुवादित तथा सम्पादित ग्रन्थों की संख्या २० के लगभग है। इन्दौर में मध्य-भारत हिन्दी-साहित्य-समिति, भालरापाटन में राजपूताना हिन्दी-साहित्य-सभा तथा भरतपुर में हिन्दी-साहित्य-समिति के संस्थापन तथा कार्य-संचालन में आप का मुख्य हाथ रहा है। अनेक विद्वत्समाजों से आप को “नवरत्न” “महोपदेशक” तथा “व्याख्या-भास्कर” की उपाधियाँ मिली हैं। आप हिन्दी के अच्छे



































सहृदय तथा मिष्टभाषी हैं। ये गुरुकुल तथा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन आदि संस्थाओं में प्रतिष्ठा-पूर्ण पदों पर कार्य कर चुके हैं।

### पं० देवीदत्त शुक्ल

इनकी अवस्था अब ३५ वर्ष के लगभग होगी। ये साईं-खेड़ा, जिला उन्नाव के निवासी, माझकल 'सरस्वती' के सम्पादक हैं। ये 'किङ्कर' नामसे कविता लिखते हैं और हिन्दी के एक अच्छे लेखक हैं। बड़े सीधे-सादे, उत्साही, मिलनसार और हिन्दी के पूर्ण पण्डित हैं।

### बाबू गोविन्ददास

जन्म बिजयादशमी सं० १९५३ विक्रम, जन्मस्थान अवधपुर। बाबू साहब हिन्दी के प्रतिभाशाली कवि, लेखक और वक्ता हैं। आपको अङ्गरेज़ी, बँगला, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान है। १२ वर्ष की अवस्था से आपको हिन्दी से अनुराग है, और १५ वर्ष की ही अवस्था में आपने चम्पावती, सोमलता और कृष्णलता नामक उपन्यास लिखे थे। इसके अतिरिक्त आपने सुरेन्द्र-सुन्दरी, कृष्णकामिनी, होनहार और व्यर्थसन्देह उपन्यास, घाणालुर-परामय नामक महाकाव्य, विश्व-प्रेम एक मौलिक नाटक तथा तीर्थयात्रा-सम्बन्धी दो ग्रंथ और लिखे हैं। ये सब अप्रकाशित हैं। राष्ट्रीय-हिन्दी-मन्दिर के मुख्य संस्थापक आप ही हैं, क्योंकि उसने सञ्चालन के लिये आपने १००००) दिये थे। शारदा-पुस्तकमाला आप ही की सहायता का सुफल है। आप स्वभावके बड़े सौम्य और उदार हैं। हिन्दी-साहित्य की स्थायी सेवा करने का आप में अदम्य उत्साह है। आप तृतीय मध्यप्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति हो चुके हैं। विद्या, धन, साहित्यानुराग

123  
 124

125  
 126  
 127

128  
 129  
 130  
 131  
 132  
 133  
 134  
 135  
 136  
 137  
 138  
 139  
 140  
 141  
 142  
 143  
 144  
 145  
 146  
 147  
 148  
 149  
 150  
 151  
 152  
 153  
 154  
 155  
 156  
 157  
 158  
 159  
 160  
 161  
 162  
 163  
 164  
 165  
 166  
 167  
 168  
 169  
 170  
 171  
 172  
 173  
 174  
 175  
 176  
 177  
 178  
 179  
 180  
 181  
 182  
 183  
 184  
 185  
 186  
 187  
 188  
 189  
 190  
 191  
 192  
 193  
 194  
 195  
 196  
 197  
 198  
 199  
 200

201  
 202

203  
 204  
 205  
 206  
 207  
 208  
 209  
 210  
 211  
 212  
 213  
 214  
 215  
 216  
 217  
 218  
 219  
 220  
 221  
 222  
 223  
 224  
 225  
 226  
 227  
 228  
 229  
 230  
 231  
 232  
 233  
 234  
 235  
 236  
 237  
 238  
 239  
 240  
 241  
 242  
 243  
 244  
 245  
 246  
 247  
 248  
 249  
 250  
 251  
 252  
 253  
 254  
 255  
 256  
 257  
 258  
 259  
 260  
 261  
 262  
 263  
 264  
 265  
 266  
 267  
 268  
 269  
 270  
 271  
 272  
 273  
 274  
 275  
 276  
 277  
 278  
 279  
 280  
 281  
 282  
 283  
 284  
 285  
 286  
 287  
 288  
 289  
 290  
 291  
 292  
 293  
 294  
 295  
 296  
 297  
 298  
 299  
 300

301  
 302

303  
 304  
 305  
 306  
 307  
 308  
 309  
 310  
 311  
 312  
 313  
 314  
 315  
 316  
 317  
 318  
 319  
 320  
 321  
 322  
 323  
 324  
 325  
 326  
 327  
 328  
 329  
 330  
 331  
 332  
 333  
 334  
 335  
 336  
 337  
 338  
 339  
 340  
 341  
 342  
 343  
 344  
 345  
 346  
 347  
 348  
 349  
 350  
 351  
 352  
 353  
 354  
 355  
 356  
 357  
 358  
 359  
 360  
 361  
 362  
 363  
 364  
 365  
 366  
 367  
 368  
 369  
 370  
 371  
 372  
 373  
 374  
 375  
 376  
 377  
 378  
 379  
 380  
 381  
 382  
 383  
 384  
 385  
 386  
 387  
 388  
 389  
 390  
 391  
 392  
 393  
 394  
 395  
 396  
 397  
 398  
 399  
 400

जगत्प्रसिद्ध रूप से मटकता है। जाय बड़े सारल, स  
धैर्य, नावुक और एक अच्छे दोस्तदार बरि हैं।

पंडित वंचन शर्मा "उग्र"

उनका जन्म-स्थान जिला मिर्जापुर में, नागौरपो और उ  
बानक हो नदियों के दोनारे के बीच में सिन्धु-पर्यंत भागा  
है। ये एक प्रतिभाशाली लेखक, कवि, क्लेशी-लेखक, नाटककार  
और समाजोपक है। गुरु लिखते हैं और अच्छा लिखते हैं  
इन्होंने "नशादना ईसा" बानक एक बहुत सुन्दर नाटक लिखा  
है। इसके अतिरिक्त इन्होंने "बन्द हंसों के गूँव" बानक  
एक और पुस्तक लिखी है। एकान्त नाटक तो इन्होंने बनेक  
लिखे हैं। ये बड़े विनोद-मय, साहित्य-रसिक और नस्लबोध हैं।  
इसी अवस्था इस समय २८ वर्ष के लगभग है।

पंडित बाबूदास शर्मा "नवीन"

जन्म-संवत् लगभग १८६६ वि०, जन्म-स्थान उज्जैन। जाय  
भाबूदास "नवीन" (बाबूदास) के सन्तानक है। जाय बड़े नावुक  
कवि तथा क्लेशी-लेखक है। कई वर्षों तक जाय "नवीन" के  
सम्बन्ध में सुने हैं। साहित्य-रूपों पर लेख लिखने में जाय बड़े  
पटु हैं। जाय पायल और बला भी हैं। जायके हृदय में राष्ट्र-  
सेवा का बहुत प्रयत्न है। जायकी रचनाओं में राष्ट्रीय ज्ञान-  
रूप के बड़े प्रयत्नों काय होते हैं।

जैनजी सुन्दरकुमार चौहान

जन्म जाय सुन्दर ५ सं० १८९१ को बंगाल में हुआ। यहां  
कास्मेट पदवी कृत में डिग्री प्राप्त की। सन् १९०५ में  
का मित्रा पदवी मित्राजी कुमार दत्तन सिंह चौहान सं० २५,  
०-२८ सं० के साथ हुआ। कलकत्ता का छात्र ने बला







बाबू भगवतावरण बनां बा० ९०

उन्न संवत् १९६० वि०, उन्न-भूमि शक्तपुर ( उन्नाव ),  
निवासस्थान कुरसवां, कानपुर। नात्रकल इलाहाबाद-पूनि-  
दलितों में एन० २० फ़ातल कलास में हिन्दी पढ़ रहे हैं। ये  
बहुत छोटी अवस्था से ही कविता लिखने लगे थे। इसको कविता  
में नावव-सृष्टिका अन्तर्द्वन्द्व और बहिर्द्वन्द्व दोनों रहता है। ये  
बड़े भावुक कवि हैं। इन्होंने 'फ़रो' तथा 'नाविक' नामक काव्य  
तथा 'पवन' नामक उपन्यास लिखा है। ये हिन्दीके बड़े ऊँचे  
दाजेके कवि और लेखक होंगे।

श्रुतिता नशदेवा बनां ✓

ये प्रयाग से कास्यकेट गल्लं हाई स्कूल में पढ़ती हैं। यद्यपि  
इन्होंने अभी बहुत छोटी रचनाएं लिखा हैं, पर जो कुछ लिखा  
है वे वास्तव में बहुत सुन्दर हुई हैं।







## विषय-सूची

શ્રવિતા                      દેવર                      પૃષ્ઠ

### इंद्र-प्रार्थना जादि

१ प्रबोधितो—भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र...	...	१
२ दोन निहोरा—धोयुत पं० छानताप्रसाद गुर्व	...	५
३ छन्देया—धोयुत पं० रामचरित उपाध्याय	...	७
४ बन्धेपन—धोयुत पं० रामचरित त्रिपाठी	...	८
५ निधुक्त का दान—धोयुत बाबू पदुमलाल-गुन्नालाल	...	१०
	दरुई, यो० ए०	१०
६ सनर्थन—धोमान् राय कृष्णदास	...	११
७ पद—धी विद्योनी हरि	...	११
८ माया—धोयुत पं० गदाप्रसाद यादव, साहित्याचार्य	...	१२
	“धोहरि”	१२
९ देषायली—धोयुत शिवदास गुन ‘कुनुन’	...	१३
१० अनुगोष—धोयुत पं० ज्योतिप्रसाद मिश्र ‘निमल’...	...	१३
११ मन को भारना—धोयुत पं० देषोदत्त शर्मा	...	१४

### इष्टयन्दना जादि

१२ लक्ष्मी-पूजा—धो कपू दाहनुकुन्द गुन	१३
१३ प्रवभापः, सिद्धो, मापेना—धोपुन पं० चमपार	१४
	१५
१४ हे खविते—धोपुन पं० नशमोरमद सिद्धे	१६
१५ गंगा-भीष—धो कपू जगन्नाथदत्त	१७
१६ जनुन-अल—धोपुन पं० सिद्धपार	१८



- ३१ निदाघी मध्याह्न—ध्रीयुत पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय... ५६  
 ३२ वर्षा-वर्णन—ध्रीयुत पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी  
 एम्० आर० ए० एस० ५८

## प्रकृति-छटा

- ३३ मयंक-महिमा—ध्रीयुत पं० बदरीनारायण चौधरी  
 "प्रेमघन" ६२  
 ३४ चन्द्रोदय—ध्रीयुत पं० किशोरोलाल गोस्वामी ... ६३  
 ३५ चमेली—ध्रीयुत पं० मन्नन द्विवेदी, गजपुरी ... ६६  
 ३६ चन्द्रिका—श्री बाबू भगवन्नारायण भागवत पी० ए०,  
 एल्० एल्० बी० ६७  
 ३७ चाँदनी—श्री लाला भगवान दीन 'दीन' ... ६८  
 ३८ जाम्बून—ध्रीयुत पं० रामचन्द्र शुक्ल... ६९  
 ३९ भानु—ध्रीयुत गुरुमकसिंह 'भक्त' बी० ए०, ...  
 एल्० एल्० बी० ७०  
 ४० फूल—ध्रीयुत पं० गुलामातन वाजपेयी "गुलाब" ... ७१

## विश्व-छवि

- ४१ बम्बई का समुद्र-तट—श्री सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ७३  
 ४२ दीप—श्री० बाबू जयशङ्कर 'प्रसाद' ... ७४  
 ४३ शमशान—ध्रीयुत पाण्डेय वैद्यन शर्मा 'उग्र' ... ७५  
 ४४ विश्व-सङ्गीत—ध्रीयुत पं० भगवानदीन पाठक,  
 'विशारद' ... ७७  
 ४५ चित्रवन—ध्रीयुत विद्याभूषण 'विभु' ... ७८

## उद्गार

- ४६ रत्नावली—ध्रीयुत पं० माधनलाल चतुर्वेदी  
 "एक भारतीय आत्मा" ८२  
 ४७ उद्गार—ध्रीयुत पं० मुकुन्दधर पाण्डेय ... ८३



क्र.	कविता	लेखक	पृष्ठ
६	स्वदेश-प्रेम आदि		
६७	कुटीरका पुष्प—धोयुत बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन		
		पम० प०, पल्-पल्० बी०	११४
६८	मातृभूमि—बाबू मैथिलीशरण गुप्त	...	११४
६९	जन्मभूमि-प्रेम—धोमान बाबू गोविन्ददास	...	१२०
७०	प्यारा हिन्दुस्तान—धोयुत पं० हरिशङ्कर शर्मा		
		"कविलाल"	१२३
७१	भारतमाता की स्मृति—धो० बाबू द्वारिकाप्रसाद गुप्त		
		"रसिकेन्द्र"	१२४
७२	अभाव—धोयुत पौरसिंह पणिक	...	१२५
७३	अशक्त सेवी—धोयुत पं० राजाराम शुक्ल	...	१२६
७४	स्वदेश-प्रेम—धोयुत जगमोहन "विकसित"	...	१२७
७५	मातृभाषा—धोमती सुमद्राकुमारी देवी चौहान	...	१२८
७६	जय स्वदेश—धोमती तोरनदेवी शुक्ल 'टली'	...	१३०
विविध विषय			
७७	युवा संन्यासी—धोयुत पं० माधवप्रसाद मिश्र	...	१३१
७८	अन्योक्ति-सप्तक—धो सैयद अमोर अली 'मीर'	...	१३३
७९	अव्यक्त प्रेम—धोयुत चतुर्वेदी पं० रामनारायण मिश्र		
		बी० प०	१३५
८०	आत्म-पुकार—धोयुत पं० माधव शुक्ल	...	१३६
८१	उन्माद—धोमान ठाकुर गोपालशरण सिंह	...	१३७
८२	स्वप्न—धोयुत सुमित्रानन्दन पन्त	...	१३९
८३	भामि—धोयुत मोहनलाल महतो गयावाल	...	१४१



# नवीन पद्य-संग्रह

## ईश्वर-प्रार्थना आदि

### प्रबोधिनी

आगो मंगलद्वय, सफल प्रवृत्तन-सुखारे ।

आगो नन्दानन्द-फल, अमुश के वारे ॥

आगो बलदेवानुग्रह, रोहिनि मात-दुलारे ।

आगो धीराधाजू के प्रानन ते प्यारे ॥

आगो फोरति लोचन सुखद, नान-नान-वदितफल ।

आगो गोपी-गोप-प्रिय, नन्द-सुखद धन-सखन ॥

होन चदत नव प्रात, चन्द्राक्षित सुख पायो ।

उड़े विहंग तजि यात विरेदन गोर नयाया ॥

नय मुकुटित उत्पन्न पयन ले यांत सुहायो ।

नन्दर गति अति पौन फलत पंदुरा दन धायो ॥

फलिका उपवन बिकसन लगी, नन्दर चडे संवार फरि ।

पूरय पच्छिम दितन महं, नन्दर तलन हृत तेजधरे ॥

इय ज्योति माः नन्द रहगन लगे अनावन ।

मां सज्जगिन दुख कुनुः मुद मुद सुहावन





दूध नाथ, नाथ ! बेनि जागो, जब जागो ।  
 नाथ-द्वय यदि दइव देव चहुं दिति सो टागो ॥  
 नरानुदता पापु बड़ावत वेदि अनुपागो ।  
 छराहृष्टि को वृष्टि पुन्नाइहु नाथ तयागो ॥  
 अपुनो बननायो जानि के करहु छरा निरिषाधन ।  
 जागो बलि देवदि नाथ जब हेहु शोन शिन्दुन लान ॥  
 प्रपन मान, धन, पुत्रि, कुमल बल, देह बड़ायो ।  
 कन सो विषय-विदूषित जब करि विरहि घटायो ॥  
 नाथ ने पुनि पांति परसर देर बड़ायो ।  
 ताही के नित जवन काळजन को पग जागो ॥  
 उनि के कर को छायाल बल, बाळ-पूत सब नाति के ।  
 जब सोवहु हो अचेत तुन, शोवन के मल पांति के ॥  
 बह गये रिक्त, नोय, राम, बलि, कर्प, पुष्टिभिर !  
 सन्मयुन, पापमय कहां गावे हेरि के मिर !  
 बह उषा सब नरे-दरे बलि गये छिने मिर !  
 बह राजा को तीर साउ छेदि जगत हे विर !  
 दुगे, सैन, पर बल मलो पूरि पूर दिखाउ डग !  
 जागी जब भी पल-बल-दलन महुं मरने जायनन ।  
 उगा विरिना स मरप मरप के मरुत  
 यह मरुति बलि नाथ जब बह मरुत मरुत  
 उगा विरिना स मरप मरप के मरुत  
 यह मरुति बलि नाथ जब बह मरुत मरुत  
 उगा विरिना स मरप मरप के मरुत  
 यह मरुति बलि नाथ जब बह मरुत मरुत  
 उगा विरिना स मरप मरप के मरुत  
 यह मरुति बलि नाथ जब बह मरुत मरुत



गुण, विद्या, धन, बल, मान बहुत सबे प्रया निटिके लड़े ।

अप राज राज महाराजकी, जानन्द सों सब हो कहें ॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

## दीन-नि होरा

( १ )

इसा इयानव नाथ सदा है अनित्य तुम्हाते ।  
ओ तुमने मुधि एनो दोन की नही बित्ताते ॥  
कौतुक अग नै करे तुम्हाते खदप्ता नाना ।  
धन, प्रभुता, बल, पुदि ब्यर्थ है निरा रक्षावा ॥

( २ )

ओ कौहो को दुखो दोन रो रो तरसे है ।  
साखा क्या नैद ! उल्लोडे पर परसे है !  
भायहार ओ संता खटिन रोयो के इल नै ।  
ओर-दान तुम नाथ उले देते हो पल नै !

( ३ )

खुटे होर को कही दोन नै अं नाना है ।  
दिल धन नै एरो नान सुखमें खरखा है ।  
मारा दोन को मारा बाप तुम हो हो उल्ले  
रिउ अने है मूल होन के खटक मल्ले ॥



## कन्हैया !

जब होता था हाथ धर्म का तब तुम जाते रहे कन्हैया !

आसो, धर्म को पाया था तब तुम सदैव कन्हैया !

जो भारत में होता-थ्यल सब का था सिरताज कन्हैया !

यही अधोमुख हो येता है गङ्गा तब मैं आज कन्हैया !

तब रहे हे तबिक सुभाषा कर पता का तब कन्हैया !

कर दे मुखर मातृ के हाता दिव्य गत का गान कन्हैया !

भूमी भारत तब रह रही है ! कहीं पक्षों के धर कन्हैया !

नभ काटिनी यही पड़ा है कहीं होंगे धर कन्हैया !

दुखदुःख कडियात दुःख है मन्त्र बन्त के सदा कन्हैया !

सदा आकाश हने उदाय अन्तर्गत के हल कन्हैया !

जिन्ना-सर मे दूध था है प्राद प्रलोक सा देत कन्हैया !

गङ्गा की मातृ हल को रख को मिट न पौरव-देव कन्हैया !

बसो प्यारे प्रसिद्ध दुःख हो ! ही आसो अनुकूल कन्हैया !

होय हल ही दिव्य हल से सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !

सदा-सदा के सदा के सदा के सदा के सदा कन्हैया !



हरिकंद और प्रभु ने कुछ और ही बताया ।  
 मैं तो सनक रहा था तेरा प्रताप धन में ।  
 तब पता सिकन्दर को मैं सनक रहा था ।  
 पर तू बसा हुआ था फख्खद कोदकन में ॥  
 फोसस को हाथ में था खरता बिनोद तूरी ।  
 तू हो खिंस रहा था नन्द के दर में ।  
 महुलाद जानता था तब सही ठिकाना ।  
 तू ही नचल रहा था मंदिर की दर में ।  
 बाधिर बनक रहा था पाँधी की हड्डियों में ।  
 मैं ही सनक रहा था सुराखरीज-ख में ।  
 बंसि तुझे निरुणा जब भेद राख खदर है ।  
 देवान होके भगवन आया हूँ मैं खर में ॥  
 तू खर है खर में, छीन्दे है सुनर में ।  
 तू माख है खर में, विस्तार है गजन में ॥  
 तू माख सिन्दुरी में, ईनाम मुस्लिमों में ।  
 शिवालय शिवधर में तू सत्य है सुख में ।  
 हे देवदत्त देता प्रविभा प्रदत्त कर तू ।  
 हेतु तुझे ज्ञान में सब में, सदा बखर में ।  
 कर्मकारने दुख का दण्डाल हा मुदत है  
 मुनक का कर्म का तू हम खर में खर में ।  
 दुख में बहर नाम सुख में तुम बहर  
 देता प्रदत्त का है मेरे कर्म का मेरे

[illegible]



## समर्पन

धूर दिया, ओ तुम्हें रखे दो रिश्ते में दूर दिया !

चाय बुंदों के देवारा,

दूर-दूर छिछोराया नाच !

दूध-भात बैठा खाता है, बाइ ! क्या बबल दिया !

कह-कोटर-बाहों निरंज को, स्वर्ण-तब बालों दिया !

दूर-दूर को सुख बसाया,

बाइलों के बालों छिछोराया ।

राज-राज का नया बखाना, बन दिया, स्वागत दिया !

—समर्पन दूर

## ५३

बंसेरु ओ नरहर करि लड़ें ।

ऊँच पर हो तुम्हें छोड़ दिए जिसकी नाल सुबाजें ।

रा उर-काज न मनुष्यो रवि उर-बाँधे दिजाऊँ ।

नार सऊ साँझ कीर सुनु, नारी नाच तुम्हें दीजाऊँ ।

नर उर-काज न मनुष्य तुम्हें उर-बाँधे दिजाऊँ ।

नार नर साँझ कीर सुनु, नारी नाच तुम्हें दीजाऊँ ।

नर उर-काज न मनुष्य तुम्हें उर-बाँधे दिजाऊँ ।

नार नर साँझ कीर सुनु, नारी नाच तुम्हें दीजाऊँ ।

नर उर-काज न मनुष्य तुम्हें उर-बाँधे दिजाऊँ ।

नार नर साँझ कीर सुनु, नारी नाच तुम्हें दीजाऊँ ।



## दीपावली

बटो में बैसे दीप जलाऊं !

बैसे बटं बुझा आलोकित दीपावली मनाऊं !

आइ विश्वके घर में देखो कितना है आलोक !

जोर हमारे घरका दीपक बुझा हुआ, हा शोक !

दृश्य यो किछ प्रकार समझाऊं ॥ १ ॥

इस नीरखी अमा रात्री में ज्वाऊं कितके द्वार !

दिन भर का विधात विचार सोचा है संतार ॥

सुख यो बैसे उड़ आजाऊं ! ॥ २ ॥

आइ शक्ति-कलावेनी बपरा खोब लिया है हाथ ।

कही शक्तिता कोई शक्ति भंगूँ कितखे बाध !

मना में प्रभा क्या खे लाऊं ! ॥ ३ ॥

भायो मेरी शिर-छाया भंगूँ मैं नष्टूर ।

इयादाव कारण काया का खेद-दीप खे दूर ।

तब तब किछ भंगि हुआऊं ! ॥

कहा मैं बैसे शिर जलाऊं ॥ ४ ॥

१३८० ॥ १३८० ॥

१

## अनुवाक

१३८० ॥ १३८० ॥

१३८० ॥ १३८० ॥

१३८० ॥ १३८० ॥



1000 2000 3000

मो यः सत्सङ्गः सर्वदा संसरेत्

कथा : बहुर रित्तर हे मंडुळ नव्हते ।

हिंसा का नाश है अहिंसे, अहिंसा का नाश है हिंसा ।

ਸੰਸਾਰ ਨਾ ਭਾ ਭੀਰੋ ਬ ਭੀਰੋ ਬਲਦਾ ਬਲਦੇ ਚੰ ਸਾਭ ।

१८ अङ्ग सं. पा रत्न रे, मे लं वि.

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

— 16 —

ਸ੍ਰ ਏ ਐਸ

॥ १ ॥

• ਸੁਧਾਰ ਤੇ ਥਾਂ ਪੈਰਿਓ ਵਧਣ ।

**附註**

—सुखं भवति तदा सुखं भवति—

[illegible]

— 25 —

— 1947 —

[illegible]

— 22 —

1. 2. 3. 4. 5. 6. 7. 8. 9. 10. 11. 12. 13. 14. 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100. 101. 102. 103. 104. 105. 106. 107. 108. 109. 110. 111. 112. 113. 114. 115. 116. 117. 118. 119. 120. 121. 122. 123. 124. 125. 126. 127. 128. 129. 130. 131. 132. 133. 134. 135. 136. 137. 138. 139. 140. 141. 142. 143. 144. 145. 146. 147. 148. 149. 150. 151. 152. 153. 154. 155. 156. 157. 158. 159. 160. 161. 162. 163. 164. 165. 166. 167. 168. 169. 170. 171. 172. 173. 174. 175. 176. 177. 178. 179. 180. 181. 182. 183. 184. 185. 186. 187. 188. 189. 190. 191. 192. 193. 194. 195. 196. 197. 198. 199. 200. 201. 202. 203. 204. 205. 206. 207. 208. 209. 210. 211. 212. 213. 214. 215. 216. 217. 218. 219. 220. 221. 222. 223. 224. 225. 226. 227. 228. 229. 230. 231. 232. 233. 234. 235. 236. 237. 238. 239. 240. 241. 242. 243. 244. 245. 246. 247. 248. 249. 250. 251. 252. 253. 254. 255. 256. 257. 258. 259. 260. 261. 262. 263. 264. 265. 266. 267. 268. 269. 270. 271. 272. 273. 274. 275. 276. 277. 278. 279. 280. 281. 282. 283. 284. 285. 286. 287. 288. 289. 290. 291. 292. 293. 294. 295. 296. 297. 298. 299. 300. 301. 302. 303. 304. 305. 306. 307. 308. 309. 310. 311. 312. 313. 314. 315. 316. 317. 318. 319. 320. 321. 322. 323. 324. 325. 326. 327. 328. 329. 330. 331. 332. 333. 334. 335. 336. 337. 338. 339. 340. 341. 342. 343. 344. 345. 346. 347. 348. 349. 350. 351. 352. 353. 354. 355. 356. 357. 358. 359. 360. 361. 362. 363. 364. 365. 366. 367. 368. 369. 370. 371. 372. 373. 374. 375. 376. 377. 378. 379. 380. 381. 382. 383. 384. 385. 386. 387. 388. 389. 390. 391. 392. 393. 394. 395. 396. 397. 398. 399. 400. 401. 402. 403. 404. 405. 406. 407. 408. 409. 410. 411. 412. 413. 414. 415. 416. 417. 418. 419. 420. 421. 422. 423. 424. 425. 426. 427. 428. 429. 430. 431. 432. 433. 434. 435. 436. 437. 438. 439. 440. 441. 442. 443. 444. 445. 446. 447. 448. 449. 450. 451. 452. 453. 454. 455. 456. 457. 458. 459. 460. 461. 462. 463. 464. 465. 466. 467. 468. 469. 470. 471. 472. 473. 474. 475. 476. 477. 478. 479. 480. 481. 482. 483. 484. 485. 486. 487. 488. 489. 490. 491. 492. 493. 494. 495. 496. 497. 498. 499. 500. 501. 502. 503. 504. 505. 506. 507. 508. 509. 510. 511. 512. 513. 514. 515. 516. 517. 518. 519. 520. 521. 522. 523. 524. 525. 526. 527. 528. 529. 530. 531. 532. 533. 534. 535. 536. 537. 538. 539. 540. 541. 542. 543. 544. 545. 546. 547. 548. 549. 550. 551. 552. 553. 554. 555. 556. 557. 558. 559. 560. 561. 562. 563. 564. 565. 566. 567. 568. 569. 570. 571. 572. 573. 574. 575. 576. 577. 578. 579. 580. 581. 582. 583. 584. 585. 586. 587. 588. 589. 590. 591. 592. 593. 594. 595. 596. 597. 598. 599. 600. 601. 602. 603. 604. 605. 606. 607. 608. 609. 610. 611. 612. 613. 614. 615. 616. 617. 618. 619. 620. 621. 622. 623. 624. 625. 626. 627. 628. 629. 630. 631. 632. 633. 634. 635. 636. 637. 638. 639. 640. 641. 642. 643. 644. 645. 646. 647. 648. 649. 650. 651. 652. 653. 654. 655. 656. 657. 658. 659. 660. 661. 662. 663. 664. 665. 666. 667. 668. 669. 670. 671. 672. 673. 674. 675. 676. 677. 678. 679. 680. 681. 682. 683. 684. 685. 686. 687. 688. 689. 690. 691. 692. 693. 694. 695. 696. 697. 698. 699. 700. 701. 702. 703. 704. 705. 706. 707. 708. 709. 710. 711. 712. 713. 714. 715. 716. 717. 718. 719. 720. 721. 722. 723. 724. 725. 726. 727. 728. 729. 730. 731. 732. 733. 734. 735. 736. 737. 738. 739. 740. 741. 742. 743. 744. 745. 746. 747. 748. 749. 750. 751. 752. 753. 754. 755. 756. 757. 758. 759. 760. 761. 762. 763. 764. 765. 766. 767. 768. 769. 770. 771. 772. 773. 774. 775. 776. 777. 778. 779. 780. 781. 782. 783. 784. 785. 786. 787. 788. 789. 790. 791. 792. 793. 794. 795. 796. 797. 798. 799. 800. 801. 802. 803. 804. 805. 806. 807. 808. 809. 810. 811. 812. 813. 814. 815. 816. 817. 818. 819. 820. 821. 822. 823. 824. 825. 826. 827. 828. 829. 830. 831. 832. 833. 834. 835. 836. 837. 838. 839. 840.









## प्रार्थना

कवि, पण्डित, पत्रिज, प्रकृति, छात्र, रतिकर, रिक्रियार ।  
 राजा प्रजा सुप्रेमवश करि हिन्दी को प्यार ॥२॥  
 हिन्दो-हिन्दुस्तान को भाषा विषद विद्याल ।  
 जनन डेर सब सों कहे "मां ! मां श ! श" बाल ॥२॥  
 घर को औघट घाट सों, खेत प्रेत समस्तान ।  
 हाट-बाट दरवार को भाषा ये हो जान ॥१०॥  
 पितृव्य शोध सके सद्गुरु कठिन नानु शृणु जान ।  
 ताही के उद्धार दित पर रची समदान ॥११॥  
 बासे जो कुछ यन सके नातापद जरबिन्द ।  
 भक्ति-भाव से पूजिये, खुद सदा बानन्द ॥१२॥

—रानचरण गोस्वामी

## हे कविते !

सुरम्यरूपं रस-राशि-रञ्जिते, विविचरणांभरणे कहाँ गई ?  
 मल्लोक्तानन्द-विधापिनां महा-कवोन्द्र-कान्ते ? कविते ? अहो कहाँ ?  
 "हं मनोहासि-मन-हता गा, कहा उठा क्षण हुई नई नई ?  
 जो न नेरं कमनयना रहो, यना तुहो तू कित लोक को गई ?  
 नही है भुवनान्तराल मे कहा गई है तब रम्यरूपता  
 मेव हाना यदि जीव-लोक मे, कनो कहो तो मिलतो नवस्थ हं  
 हुआ क्या कवि कालिदास के शरण के साथ तनो बनाध हो  
 कवि नवभूति-सङ्ग हो, हुई महांसे अवलम्ब के बिना हो ॥



सुजान है दूंद खे जहाँ तहाँ, परन्तु तू काब्य-कले वहाँ कहीं ?  
 बना सके आकृति नो कनो यदि वृथा परिधान्त तथापि सर्वथा ।  
 बताए, जीव-विहीन देह से, सजीव को सुन्दरि क्या समानता ?  
 विचार ऐसे अगदम्ब है जहाँ, न दशनों का तब आसरा वहाँ ।  
 अजेय इच्छा उस ईश को उसे, विनष्ट कोई सकता नहीं कर ॥  
 विदग्धता ओ यह हो रही तब, समूल हो भूल उसे दयामयि ।  
 पधारने को अनिलाप हो यदि, न मा जनों तथापि है मनोदरे ॥  
 बनो निलेगा ब्रह्म-भण्डलान्त का, अयुक्त भाषानय वस्त्र परु हो ।  
 शरीर-सङ्गो करके उसे सदा, विराग होगा तुझको अवश्य हो ॥  
 इसीलिये हो भवभूति भाविते, जनों यहाँ है कविते न जा, न जा ।  
 बता तुझे कौन कुलीन कामिनी, सदा चढ़ेगी पट परु हो वही ?  
 सुरम्यता ही कमनीय कान्ति है, अनूल्य जात्मा रत्न है मनोदरे ।  
 शरीर तेरा सब शब्दनाथ है, निवान्त निष्कर्म यही, यही, यही ॥  
 हुवा जिन्हें श्राव्य रहस्य है यह, यही यहीभूत तुझे करेगे ।  
 विठन्व सेवा बदिलन्व सेवा, दया उन्हीं पे तब देखि हेनो ॥

कुछ सनय गये पे योग्यता ओ दिखावे,

सदय-हृदय दोऊ नृत्ती के यहाँ जा ।

न उचित अदला का नित्य स्वच्छन्दबात,

चत अधिक कहं क्या है महानोद शक्ति !

—नरवीरप्रसाद द्विवेदी

गंगा-गौरव

( १ )

विधि दरदावर को सुज्ञ-तनूति वृद्धि.

तनु सु नायक का सिद्धि को सुनाका है





[illegible][illegible][illegible]



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

## श्रीगणेशाय नमः

— श्रीगणेशाय नमः —

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥

• • •

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥  
 श्रीगणेशाय नमः ॥

























# पौराणिक

## मदन-दहन

( १ )

विराजि आसु आश्रय एतिदुष्टर मरु दुष्टि भाव्यो ।  
आत्र सृष्टि एर हेतु आदिजन इहता साव्यो ॥  
तेहि विरिद्धि लवि भाव्यत साव्यत पुबि भाव्यो ।  
इन्द्रियविषय विर भाहिं आत्र लो विरिद्धि विवाह्यो ॥

विरा होवहार एति आर अरु, भई भाव सौतेय आ ।

अधि एतम आत्मना विर दहन, लभ्यो भाव विभुजन विवा ॥

( २ )

आत्मन भाहिं एतु अरु अ तु भाव साव्यतव ।  
मरु मरु एर भावि शवात आदित आत्मन ॥  
अरु अरु अरु भावि शवात भावि लभ्यत अरु ।  
लभ्यत विरिद्धि लभ्यत लो भावि मरु ॥

लो लभ्य विरिद्धि लभ्यत अरु भावि लभ्यत अरु ।

अरु लभ्य विरिद्धि लभ्यत अरु, लभ्यत विरिद्धि लभ्यत अरु ।

( ३ )

अनु भाव्यत अरु भावि लभ्यत अरु अरु ।  
मरु लभ्यत अरु भावि लभ्यत अरु अरु ।  
अरु लभ्यत अरु भावि लभ्यत अरु अरु ।  
अरु लभ्यत अरु भावि लभ्यत अरु अरु ।



कटु समा कुञ्चित किये दच्छिन पांव फांध लुकाय ।

मद पाम पदकारि जम विछसत दुविय नेन दयाय ॥

नित्र तपस्या निरखि <sup>( ८ )</sup> बाधित कोप फरि त्रिपुरारि ।

भये विकट स्वरूप, ओ महि नेक जात निहारि ॥

भंग करि भृङ्गुटोन दोन्हों तृतीय नेन उधारि ।

कदो जाखों जगलमाल प्रवण्ड बलि भयहारि ॥

\*उमहु दे प्रनु उमहु <sup>( ९ )</sup> फोर फराळ, शिनुवन पाल !

होय व्योम प्रवृत्त ओ तगि देवन्देव विहाळ ॥

हासु प्रथमदि प्रलय फरनि ललाट पख की जगल ।

कियो मारदि छावत अति नरो तेज फराळ ॥

अति अगाधरजित <sup>( १० )</sup> योगवि सकल रोधनहार ।

स्वतन्त्रास भुजाय, रति धर मोह \* किय वरकार ॥

तपोहर तेहि विपन-विटरिदि वडित सन भरकाय ।

गपन छद ने गुन तपयोगनस्तनीर विहाय ॥

मह धरिज लखि <sup>( ११ )</sup> रोधका ओ भयनीत महान ।

मह विना-भरवदि छरदि, नव अति बिये नयान ॥

स्वतन्त्रास बहु <sup>( १२ )</sup> लोच तेहि अविचल दहाई ।

अभिनाविन दंडकाय तेहि विज काज बनाई ॥

दे तिन दे उर रात आवि भावा बहुत भारी ।

तव रात पुंछ रजव उरि बदि विरद विहायी ॥









जाते लोहा-विपुल नट है आज भी राँव जाया ।

कोई को भी न जर उनके घेउ छो देखता है ॥

प्यारे होते मुश्किल जितने कोतुखों से छड़ा थे ।

ये आँखों में विषम दृश है दर्दको के लगाते ॥

प्राण पाता फिर बदलो को बड़े पार से पा ।

पाँव पाते दुःख पड़ता नाचता कुरा पा !

ये बातें ही सरस बनने देखते पार जाती ।

हो जाता है मधुकर और लिख भी इन्धकारी ॥

हा ! ओ पंखे सरस से विश को मोड़ो पा ।

सो जाते थे मलिनस भी नूत होके पड़ी है ॥

ओ जिन्हें से मलिनसता मूरि पां सुगंध था ।

सो श्रमसा पान दिखता उन्नत है बकाती ॥

प्यारे जयो ! सुन बरता आज मेरी कनो है !

कदा होता है न जर रहने प्यार मुझे रिता था ।

तेरी होके विरक्त भरो बार को ही दिखने ।

हा ! ये खंख सरस सिंगु है कदा नही पार जाते !

कैसे नूत सरस पविता जाते को दोरिकाते ।

कैसे नूत सुदृश्य के सेतु से पार जाते ॥

हा ! पार मधुकर दृश को कल पार रहता ।

कैसे नूत मधुकर पविता पविता मलिनस ॥

कैसे नूत पविता पविता कल पार पविता नूत !

कन को से पार पविता दुःख-मुक्त पार है ॥

कैसे नूत मधुकर पार से पार नूत पार नूत !

कन नूत पविता पविता पविता पविता पविता ॥





















































## चन्द्रिका

देवदत्त-पक्ष-निधि में तिथि पूणिमा की,

देती उमङ्ग मन में सब प्रमियों प ।

देखा, पुधांशु किरणों बिफला रहा द,

खंसार में अचरअङ्गुल मादन का ।

दे लियु भी उलझता तप बार चन्द्र ।

जवा मन्त्रमादन बढ़ा सुमने पर द ।

देवदत्त रूप पर गुण हुए अनक

द माधवी उदधि-गुह्य बालिका

दा । शक्ति कामरूप भी करक अकर

लदन बार सब द करती रुदक

दे कभी उलझि रह का सुम गुण देत

प्राप्ति पुनः उलझी उलझी निरर ।

दे कभी कभी कामरूप अनकराव देत

देते बढ़ी बिजल रुतन की उलझी

का रुतन गुण गुणों निरर उलझाव

दे कभी देते गुण गुणों निरर उलझाव

मागी कभी अकर भी अकराव देत

मा दै निरर गुणों निरर रुतन कामरूप

दे कभी देते गुण गुणों निरर उलझाव

दे कभी देते गुण गुणों निरर उलझाव

कोरुत उलझाव गुणों निरर उलझाव

दे कभी देते गुण गुणों निरर उलझाव

1. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 2. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 3. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 4. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 5. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 6. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 7. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 8. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 9. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 10. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի



Այս Երեմիայի

1. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 2. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 3. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 4. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 5. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 6. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 7. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 8. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 9. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի  
 10. Երբ որ Երեմիայի Երեմիայի Երեմիայի















गिरि-संकट में जीवन-स्रोत नन नारे चुप रहता था !  
 कल कल नाद नहीं था उसमें, मन को यातन कइता था !  
 इसे जाह्नवी सा आदर दे किसने मंट चढ़ाया है !  
 अंचल से सस्नेह बचाकर छोटा दीप जलाया है ॥  
 जला करेगा वसुस्थल पर यहा करेगा लइरी में ।  
 नाचेंगी अनुरक्त बोंचियां रंजित प्रभा सुनहरी में ।  
 बट-बट की छाया फिर ढसका पैर चूमने आवेगी ;  
 सुत खगों की स्मृति नीख कलख से गान सुनावेगी ।  
 देख नश्र सौन्दर्य प्रकृति का, निर्जन में अनुरागी हो—  
 नित्र प्रकाश डालेगा, त्रिषते, प्रखिल विश्व समनागी हो ।  
 किसी नाधुरी स्मित का होकर यह संकेत बताने को ।  
 जला करेगा दीप, चढ़ेगा यह स्रोत यह जाने को ॥  
 — जयशंकर 'प्रताप'

### इमशान

सैकत-रुप्या एक तुन्दारे पास है,  
 दिव्य देव-सरि पात्र एक जलरान का ।  
 अर्पनास तक अन्धेरेमें वास है,  
 शन्दु-क्यों से दीपक पाते शान का ।  
 एकमात्र आहार तुन्दारा वायु है,  
 अन्ध है प्राचीन एक आकाश हो !  
 सुनता हूं मैं अन्त-हीन तब वायु है,  
 मृत्यु प्रिया विल्यात पुत्र है नश्वर हो !







## चित्रवन

( चित्रकूट का )

हे सौन्दर्यांगार ! वषट्गनि ! सुखमासार मनोहारो !  
 हे डरवन की अतुलितशोभा ! हे सजीवउदितनुधारो !  
 दिग्बद्धतियो ! मन्व्यभूतियो ! विधिविविधकृति ! चपलाओ !  
 विचरणशोलाकमलपंचुरियो ! प्रेमपुतलियो ! बहलाओ ॥  
 अशो प्रत्रापतिविश्रप्योलिओ ! बहुविधरंगित फलिकाओ !  
 हे संचितिनोहिनिमालाओ ! सुमनविहारिणो रसिकाओ !  
 हे द्रुतगामो मानसगतियो ! हे परिवर्त्तनशोलाओ !  
 हे अणभंगुरमंगलध्वनियो ! हे अस्यायीलीलाओ ॥  
 फूलों में पँखुगे, पत्तों में तुम पत्तों बन जाते हो ।  
 इस विधि-स्फुटं श्राप बवाकर नित पराग छितराते हो ॥  
 तुम फूलों पर बलि जाते वे हृदय चीर बिठलाते हैं ।  
 देखें इन तितली फूलों में कौन अधिक बढ़ जाते हैं ॥  
 विटपाबलो फली फूली है लतापुञ्ज मंजुल छाये ।  
 वातायन-युत-कुञ्ज-मनोहर कहीं देखने में आये ॥  
 गुञ्जित भृङ्ग हसित पुष्पों पर रस लेने को आते हैं ।  
 कुभा न प्यासों के घर आता प्यासे उस तक आते हैं ॥  
 फलित फलाप फलाप तानकर नर्तक बना फलापी है ।  
 मेघ नृदङ्ग गंभीर-गर्जना व्योमस्तल में व्यापी है ॥  
 सौदामिनो मंजु मुरली भी कभी कभी सुन पाते हैं ।  
 मंगलवार मोरनी गार्ती उत्सव जीव मनाते हैं ।  
 मेघक है या नील-गगन में इन्द्र-चाप के तारे हैं ।  
 या है सुमन विविध विश्र या बहु रंगो अति प्यारे हैं ॥









यद्यपि छट्टु है स्रजहारो है फल मोठा देनेवाले ।  
 रोकर भी बौरों के दुष्ट को ये ही हर लेनेवाले ॥  
 पीतस्त्वक् पीतमपि मानो हरि शिखा पर फैलाये ।  
 घटा अंधेरी देख इन्हें ये ध्यानबोर लेने आये ॥  
 आपस में जब फूट हुई तो काँव-काँव करते भागे ।  
 निम्न करुण पत्तोंसे डर कर अन्य द्विजों ने ये त्यागे ॥  
 दो सइस्कार सहाइर मानो या दोनों सइस्कारी हैं ।  
 यक्षपत्र के साथो दोनों हैं लग्नो भुजा पसारो हैं ॥  
 मानो मिले बहुत दिन पीछे गाढ़ाङ्गिन करते हैं ।  
 फटरव मिल वे पातवीर से पयिर्को के मन हरते हैं ॥  
 बिर साँवित फल लुटा चुके हैं भला छौन ऐसा दानी ।  
 वारिष्क यज्ञ दिया करते हैं देवल पेय पवन पानी ॥  
 कोपल बेंगो हुई झाल पर सुखको मदिमा गाती है ।  
 गये हुए उन सफल दिनों को तिर से पाद दिटातो है ॥  
 पिक अपनी काकड़ी चुनाकर नोड़ खो सारे प्राणो ।  
 हाँ, रत्नाल के सरस फलों से हुई मधुर तेरी चामो ॥  
 शेर स्वर्गो को भूछ गई क्या पंचम स्वर जो बरनाया ।  
 कुह कुह क्या कहतो है कड जा तेरे जो मैं आया ॥

—विश्वभूषण 'विभु'





✓ दमयन्ती के "एक चोर" की माँग हुई बाजी पर।  
 देश-निकाला स्वर्ग पनेगा, तेरी नाराज़ी पर!

शोभमयी मनुहार—

किन घड़ियों में तुझको भाँका तुझे भाँकना पाप हुआ !  
 आग जगे घरदान निगोछा मुझ पर आकर शाप हुआ !  
 जाँव हुई, नभ से भूमंडल तक का व्यापक नाप हुआ !  
 अगणित बार समाकर भी छोटा हूँ—यह सन्ताप हुआ !  
 अरे अशेष ! 'शेष' की गोदी तेरा घने बिलौना सा ।  
 आ, मेरे आराध्य ! जिला लूँ मैं भी तुझे बिलौना सा ॥  
 —“एक भारतीय आत्मा”

### उद्गार

मेरे जीवन की लघु तरणी ! आँखों के पानी में तरजा ॥  
 मेरे उर का छिपा पज़ाना, अड्डहार का भाव पुराना,  
 बना आज तू मुझे दिवाना, तस स्वेद-वूँधों के ढर आ ॥ १ ॥  
 मेरे नयनों की चिर आशा, प्रेम-पूर्ण सौन्दर्य-पिशासा,  
 मत कर नाहक और तमाशा, आ मेरी आँखों में भर जा ॥ २ ॥  
 मृदुल मनोरथ-तरु में फूला, फूल गङ्गा में अपने भूला,  
 भूल चुका बस जो कुछ भूला, अब अपनी डाली से भर जा ॥ ३ ॥  
 बढ़ो हृदय में चिता फराला, ऊपर नभ तक उठती ज्वाला,  
 मरण-दुःख ! ले मुक्कामाला, गिरकर अब उसमें तू मर जा ॥ ४ ॥  
 ये मेरे प्राणों के प्यारे ! इन अधीर आँखों के तारे !  
 यहुत हुआ मत अधिक सतारे ! बार्ते कुछ भी तो अब कर जा ॥



## मन-मान

नछली, नछली कितना पानी ? जरा बता दो धाज,  
देखूँ कितने गहरे में है मेरा ओर्ष जहाज ।  
मन को नछली दुपको खाकर फड़ दो कितना जल है,  
कितने नीचे, कितने गहरे, कहीं पाइ का पल है ?

पंखिल घल, सुनील जल, झिल-झिल, हुए कहीं है एक ?

नछली नछली मुझे बता दो, कहीं पाइ की रेख ॥

कई बार तल से टकसाया, फिर भी पता न पाया,  
ज्यों ही पैठा, त्यों ही उकना कर फिर से उतराया ।  
जल-निधि से उलीचने को टपकाये बिन्दु अनेक,  
चिन्नु टिट्टिरी का घोरज छूटा, बधाइ जल देख ।

जब तुमसे कहता हूँ, मुझको जरा बता दो मोन ।

कितने नीचे तल को भूनि तिमिट्यो है संकीर्ण ?  
तरल तरंगें दड़ जाती हैं होता हूँ ईरान,  
ये लटकी बहरेँ तिखित करती टटका मैदान ।  
दहाँ, वहाँ सूर्यब आप ही आप जलधि का क्षार,  
क्षीर्णित हो जाता है मन अवनत पर प्रतिपार ।

कैसे पड़ जल का प्लावक विस्तार होवेगा शान्त ?

मन को नछली, क्यो हृदय कैसे होगा विधान्त ?

तुम्हें डूबने ही में क्या सुख निद्रता है जल-सोच ?  
जाने में संकोच दिया कालो हो क्यों पल-सोच ?  
मेरा जल घल एक हो खा है, न करो कुछ सोच,  
शायनाश का अर्घ हो गया है जंवन का टोच ।



( २ )

शेरनिधि की थी सुनतरंग, सरलता का न्यारा निबंर ।  
हमारा वह सोने का स्वप्न, प्रेम की चमकीली नाकर ।  
शुन्र ओ या निनेध गगन, सुमन मेरा संगी जीवन ॥

( ३ )

बलशित जा खिसने चुपचाप, सुना छरके सग्नोद तान ।  
दिवाकर माया का साम्राज्य, पना ढाला इसकी अज्ञान ।  
मोह-मदिरा का नास्वास्तन, किया क्यों है भोडे जीवन ।

( ४ )

तुम्हें दुहराता है नेराश्य, हँसा जाती है तुमको वाश ।  
नवाता है तुमको संसार, लुभाता है तृष्णा का दास ।  
मानते विष को संगीवन, मुग्ध, मेरे भूडे जीवन ॥

( ५ )

न रहता मौरो का आह्वान, नहीं रहता फूलों का राज ।  
कोकिला होतो अन्तरध्यान, चला जाता प्यारा शत्रुराज ॥  
अस्तमव है विरसग्नेहन, न भूलो क्षण-भंगुर जीवन ।

( ६ )

विहसते, मुरझाने को फूल, उदय होता छिपने को चन्द ॥  
शून्य होने को भरते मेघ, दीप जलता होने को मग्द,  
यहा किसका अन्तत यौवन ! अरे अस्थिर छोटे जीवन !

( ७ )

छलरती जाती है दिन-रेन, लयालब तेरी प्याली मोत ।  
ज्योति होती जाती है क्षीय, मँन होता जाता संगीत  
करो नयनों का उन्मीलन, क्षणिक है मरवाडे जीवन !





रो, हुन्दा तू सत्य बता दे, क्या है यह सब साया है ?

या स्मृति है, जपया कविको फलित वित्स्मृति छाया है ?

—उतांऊहुत्तेन 'नटवर'

## तुम और मैं

( १ )

तुम तुझ दिनालय मृदु, और मैं बंचल गति सुर-संविता ।

तुम विमल हृदय-उल्लास, और मैं फान्त-फानिनी कविता ॥

तुम प्रेम—और मैं शान्ति ।

तुम सुषपात धन-मन्थकार, मैं हूँ मरवाली चाँति ॥

( २ )

तुम दिनकर के घर-किरप-ब्राह्म, मैं सरस्वति की मुसकान ।

तुम वर्षों के बोंते वियोग, मैं हूँ पिछली पड़वान ॥

तुम योग—और मैं सिद्धि ।

तुम हो रागातुग निरुल्लस तप मैं शुबिता सरल समृद्धि ॥

( ३ )

तुम मृदु मानस के भाव, और मैं मनोमोहनी जाया ।

तुम नन्दन-धन-धन-विष्ट, और मैं सुख-छोतल-तल छाया ॥

तुम प्राय - और मैं काया

तुम शुद्ध सच्चिदानन्द रूप, मैं मनोमोहनी जाया ॥

( ४ )

तुम प्रेममयी के कडुआर, मैं बेजो काट-जायिनि ।

तुम का-प्लव-बंहुत तिकार, मैं दगाहुत विरह-रगिनी ॥

तुम पय हो, मैं हूँ रेणु ।

तुम हो राधा के मन-मोहन, मैं उन जपों की बेनु ।







## विदा !

मायाओं के स्वप्न, क्षणिक जीवन के विषम विषाद विदा !  
 भावों के सुख-स्वर्ग, कहरना के सुन्दर प्रासाद विदा !  
 विदा 'मह' की उलमप छाया भ्रान्ति-पूर्ण उन्नत नशांति !  
 उद्गारों के पैग, महत्याकांक्षा के उन्नाद विदा !  
 नाया और ममत्व, वासना के मक्काटे राग विदा !  
 विश्व-कुसुम के पागल करनेवाले मधुर राग विदा !  
 विदा पैशना और हृदय की छलन कथा के उपसंहार ;  
 परिधि-रहित परिहाय, और उस मौन-व्यथा की आग विदा !  
 तेलुर तृप्त का उतावली की है अनन्त अन्त विदा !  
 सौन्दर्य के दोषानेपन की पद तरल तरङ्ग विदा !  
 विदा भुवों के विस्तृत सागर की उच्छृङ्खल उच्च उन्नत ;  
 और बास के भाषण स्वर की ध्वनि-प्रतिध्वनि के अन्त विदा !

—महादेवीचरण शर्मा



छेज छाड़ूखो नहि सापो नाउ, रिता, सुउ, गंरो ।  
 बरने छरन आपने संगो और भावना मोरी ॥  
 छल छयापक स्थानि सुखइते टेहु प्रीति द्विप जोरी ।  
 नाहि तु किर पावार हयें छेज नाउ न पूछइ सोरी ॥

— प्रतापनारायण निम्न

### प्रशस्त-पाठ

कह कोन प्रगाथ-परोरिधि के उल पार मया उल-मान रिता ।  
 निल प्राप, बरात, उशन रटी, धन दे ब छमाव छन्नाव रिता ॥  
 कहिये प्रुव धिय निआ बिछकी, करिकउर बलउठ भ्याव रिता ।  
 कवि 'राहु' मुक्ति व हाथ लया, जनकाउक निमंत हव रिता ॥

एह पाठ प्रकाश प्रकाश-मरे छरता एव उमर लमाव मरे ।  
 एव सोर भवावक भावत ने मर देरक पार छन्नाव मरे ॥  
 धन, धान बिहार धराउउ दे धरदार कसंकर लमाव मरे ।  
 कवि 'राहु' निदि मराएछो, उह मुह मुहोष अमार मरे ॥

उपलभ-क मुने मर छे, एहि के अनुजार मुहोष मुहोष ।  
 एव लमाव लमाविकि मर मरे, एह देह मुहोष बिहार मुहोष ।  
 मुहोष लोचन मर मर-उ देह अमार मुहोष बिहार मुहोष ।  
 मर 'राहु' क व रिता व उह छर कोर रिता मर मर मुहोष ॥





## ज्ञानारुणोदय

( १ )

विघन-विनाशनहार ! अघन घन हेत प्रमञ्जन ॥  
परम रुचिर करि चरित हृदय विचरत मन रखन ॥  
लोला अगम अपार सकुञ्ज बस्तुन महँ दरसत ॥  
व्यापि रह्यो सब माँहि यादिते सोमा सरसत ॥

( २ )

तुमही सुमन सुगन्ध पाटिका तुमही मालो ।  
तुमही तद्वर सुकल तुमहिं ढाली हरियालो ॥  
तुमही सख्या दिवस निशा अब तिनके फारन ।  
तुमही राजत तेज तिमिर तुमही अगधारन ॥

( ३ )

दृष्टि तहां लगि जाइ जईं लगि चरित विहारो ।  
जान जगत यह फाड, जौन यह नैन निहारो ॥  
तुम परिवर्तन विषय धेरि छन छन प्रति फरह ।  
अस प्रभुता तउ निजजन पे ममता अति घरह ॥

( ४ )

तब सरनागत नाथ ! बचन आरत उच्चारत ।  
परिवर्तित जग माहिं आजु सेवक एगु धारत ॥  
तब चिन्तन मन माँह विहारो नुञ्जस बचनवर ।  
तुम्हरी सेवा माहिं करन मेरो रह तत्पर ॥







## ज्ञानारुणोदय

( १ )

विघन-विनाशनहार ! अघन घन हेत प्रमथन\* ।  
 परम रुचिर फरि चरित हृदय विचरत मन रञ्जन ॥  
 लोला जगम अपार सकल वस्तुन महँ दरसत ।  
 व्यापि रहो सब माँहि यादिते सोभा सरसत ॥

( २ )

तुमही सुमन सुगन्ध पाटिका तुमही माली ।  
 तुमही वस्त्रर सुकल तुमहि डाली दरियाली ॥  
 तुमही सन्ध्या दिवस निसा अरु दिनके फारन ।  
 तुमही राउत तेज विमिर तुमही अगधारन ॥

( ३ )

दृष्टि तहाँ लगि आइ अहाँ लगि चरित दिशरो ।  
 जान जगत यह फाह, औन यह नैन निहारो ॥  
 तुम परिवर्तन विश्व धरि छन छन प्रति करहु ।  
 अस प्रभुता सब निजजन पे नमता अति धरहु ॥

( ४ )

तब सरनागत नाथ ! बचन आरत उन्वारत ।  
 परिचितन जग माहि जानु संवक पगु धारत ॥  
 तब चिन्तन मन माँहि दिशरो मुझस बचनपर ।  
 तुम्हरो सेवा माहि करम मेरो यह ठहर ॥



## फूल की कहानी

दो दिन खेल गया उपवन में ।

रूप मनोवा टेकर भाया, खेला-कृश हँसा-हँसाया ।

शिव-मुरमि से घन मंदकाया ॥

इससे पढ़कर भडा और फ्या रक्खा है जीवन में ॥१॥

गुप्त-सौंदर्य देखकर प्यारा, रोऊ गया नाछो हत्याय ।

और धिया डालो से न्यारा ॥

तोड़ के चढा दुष्ट देवने दया न आई मन में ! ॥२॥

अंशित सब ने सोख चढ़ाया, मृत हो जाने पर दुष्टराया ।

घर से बहुत दूर फिचवाया ॥

लपो रही दुनिया सदैव-सी करने मन के धन में ।

दो दिन खेल गया उपवन में ॥३॥

—बदरोनाथ भट्ट

## सज्जनो का स्वभाव

दिनकर बनल्यो यो स्वच्छ देता मुहास ।

यधि कुन्द गयो यो रस्य देता विहास ॥

जलद बाछते है भूमि में जन्मु-पारा ।

मुज्जन बिन पड़े हो साधते कार्य साध ॥

रिखल बलि सुधा छे देख के पुत्र प्यारा ।

अनि-दर स है पूछी दुखकाय ॥

जबका कुदस्ता ओ दोन कुपो जवो कां ।

सहस नरद हंती है दया सज्जनो का ।

व्यस-हित हंती है दरिद्र-मयात ।





## फूल की कहानी

दो दिन खेल गया उपवनमें ।

रूप बनोया लेकर आया, खेला-कूश हँसा-हँसाया ।

दिव्य-सुरभि से वन मँदकाया ॥

इससे बढ़कर भला और क्या रखे है जीवन में ॥१॥

गुण-सौंदर्य देखकर प्यारा, रोऊ गया भावो हत्यारा ।

बौर किया डालो से न्यारा ॥

तोड़ ले चला दुष्ट येवने दया न आई मन में ! ॥२॥

जीवित सब ने सोस चढ़ाया, मृत हो जाने पर टुकराया ।

घर से बहुत दूर फिखवाया ॥

लगी रही दुनिया सदैव-सी अपने मन के धन में ।

दो दिन खेल गया उपवन में ॥३॥

—वदरोनाथ भट्ट

## सज्जनों का स्वभाव

दिनकर फमलों को स्वच्छ देता सुधास ।

शशि कुमुद गणों को रम्य देता विकास ॥

जलद बरसते हैं भूमि में अम्बु-धारा ।

सुजन बिन कहे ही साधते कार्य सारा ॥

विकल अति क्षुधा से देख के पुत्र प्यारा ।

अननि-हृदय से है छूटती दुग्धधारा ॥

उखार कुदसा उषो दोन दुःखो जनों की ।

सहज प्रकट होता है दया सज्जनों की ॥

लहर-रहित होता है पयोधि-प्रशांत ।



कहीं शय्य से श्यामल खेत खड़े, जिन्हें देख घटा का भी मान घटा ।  
 कहीं सोखों उड़ाड़ में झाड़ पड़े, कहीं बाड़ में कोई पड़ाड़ सटा ।  
 कहीं कुञ्जलता के बितान ठने, सब फूलों का सौमन्य या तिमटा ॥  
 झरने झरने को कहीं झनकार, फुहार का हार दिविव ही था ।  
 हरियाली निराली न माटी लगा, फिर भी सब ढङ्ग पवित्र ही था ।  
 क्षणियोंका तरोवन था, सुरभी का उद्धारर तिर भी निव ही था ।  
 बस जान दो सात्विक सुन्दरता सुख संपत्ति शांतिका विव ही था ॥  
 कहीं झोल क्षितारे बड़े बड़े प्रान, गृहस्थ निवास बने हुए थे ।  
 खपरैलोंमें फड़ू, करैलों को बैठ के, खूब तनाव ठने हुए थे ।  
 जल शीतल बन्न उही पर पाकर, पक्षों घों में घने हुए थे ।  
 सब ओर स्वदेश, स्वजाति, सम्राट् मलाई के ठान ठने हुए थे ॥  
 इस भांति निहारते लोचकी लीला, प्रसन्न थे पक्षी फिर घर को ।  
 उन्हें देखते दूर ही से मुख खोल के, बच्चे चलें चट बाहर को ।  
 दुलारने, बिलाने, पिलाने से था, अवकाश उन्हें न घड़ी भर को ।  
 कुछ ध्यान ही था न श्वनर को, कहीं फाँट चढ़ा रहा है शर को ॥  
 दिन एक बड़ा ही मनोहर था, छवि छाई बसन्त की कानन में ।  
 सब ओर प्रसन्नता देख पड़ी, उड़-चेतन के तन में, मन में ।  
 निकले थे सपोत-सपोतो कहीं, पड़े गुच्छ में घूम रहे वन में ।  
 पहुँचा यहाँ घासडे पास गिरायो, शिकारको ठान में निर्वन में ॥  
 उस निर्दय ने उसी पेड़ के पास, बिठा दिया आलको खीरल से ।  
 वहाँ देख के बन्न के शाने पड़े, चले बच्चे बनिज ओं पे छल से ।  
 नहीं जानते थे कि यही पर है, कहीं दुष्ट मिड़ा पड़ा भूतल से ।  
 बस, फाँस के बाँस के बन्धन में, फर देगा इलाक हमें बल से ॥  
 जब बच्चे फँसे उस आल में जा, तब वे घबड़ा डले बन्धन में ।  
 इतने में श्वनरो बाँई यहाँ दया देख के व्याकुल हो मन में ।  
 कड़ने लगा हाय हुआ यह क्या ! सुत नरे इलाक हुए वन में ।  
 अब आल में जावे मिरुं इतने सुख ही क्या था इस जंवन में ॥



पर ओ मन भोग के साथ ही योग के काम पवित्र किया करता ।  
परिवार से प्यार भी पूर्ण रखे, पर-पौर परन्तु सदा हस्ता ।  
निज भाव न भूल के, भाषा न भूल के, विघ्न-व्यथा को नहीं दरता ।  
कृतकृत्य हुआ हँसते-हँसते, वह तोष-संकोष बिना मरता ॥  
प्रिय पाठक ! आप तो विद्वान् हो हैं, फिर आपको क्या उपदेश करें ।  
शिर पे शर ठाने बहेलिया फाँट खड़ा हुआ है यह ध्यान धरे ।  
दशा अन्त को होनी क्षणोत् क्षणोत् ऐसी, परन्तु न आप जरा मो डरे ।  
निज धर्म के कामे सदैव धरे, कुछ बिन्दु यहाँ पर छोड़ मरे ॥

—रुनारायण पण्डित

### नकली फूल

( माया के प्रति जीव की उक्ति )

नालिन, कैसे हैं ये फूल ?

क्या ये मेरे स्वामी को भी होंगे दवि-अनुकूल ?  
होगो कैसे वह फुलवारी, शोभित कैसे होगी क्यारी,  
होगी यहाँ बिड़ो सब चिड़फर ज्यों सुन्दर मखतूल !  
कैसे इनको खुदबू देखें, कह दो तो इनको छू देखें,  
क्या करती हो—करते हैं हम पड़ते दान वसूल !  
बोले तो, लो दान पताने, अपना सौदा तुम्हीं चुकाओ,  
'जीवन' अच्छा है जो इन पर गयी सनी नति भूल ।  
उब से मैंने देखा इनको, जीवन का धन देखा इनको,  
क्या इतने सुन्दर स्थानों को होंगे नहीं डुबू ?  
यह क्या ! नेक सुवास नहीं है—इस उग में विश्वास नहीं है,  
हाय हाय ! यह क्या कर डाटा, जीवन पया सनूल ॥

—देवप्रसाद गुप्त



[illegible]





( २ )

किया कभी न बिचार साध क्या करने लाये ;  
 होने क्या छे बिदा—न समझे, पाप कमाये ।  
 सधा त्याग न दिया व्यर्थ हो यासर खोये ;  
 यात्री होते परन्तु राह में फाँटे बोये ।  
 हा ! कर्माधिन बपसीति हो, छोड़ चले संसार में ;  
 हम उत्तर देंगे क्या भला, ईश्वर से दरबार में ?

( ३ )

बल-बलतर आयु, न तब भी सुख फमाते,  
 हाथ हमारे भाव बिगड़ते हो ही जाते !  
 बिषयो में फँस रहे, न मन का मैल छुड़ाते,  
 कर्माधिन नित नये जाल जग में फैलाते ।  
 हम शुचि सत्त्वे ध्रुव ध्येय को प्राप्त न होना चाहते,  
 तनु-तरापी को नव-सिन्धु में वृषा डुबाना चाहते ॥

—“कुरु”

### पुस्तक-प्रेम

मैं जो नया ग्रन्थ विलोकिता हूँ, माना मुझे सो नया मित्र सा है ।  
 देख उसे मैं नित बार-बार, मानों निला मित्र मुझे पुतना ॥  
 “ब्रह्मन, तजो पुस्तक-प्रेम भाव, देता बना हूँ यह राज्य सारा ।”  
 कहे मुझे वो यदि ब्रह्मज्ञी, “देता न राजन् कहिये” कहूँ मैं ॥  
 ब्रह्मन् ब्रह्मन् नय हुआ है, सुख का जो मन गेड में हो ।  
 बतारय, हे मन निबद्ध ! क्यों तूँ बिलो के फिर शन हो मैं ॥



कर्मों के अनुसार हमें वद दुख देता है ,

उनके हो अनुकूल हमें वद सुख देता है ।

फिरतु कर्म के जटिल बन्धनों-मध्य पड़े क्यों ?

हरि की इच्छा-पूर्ति-हेतु हम यहाँ सड़े क्यों ?

नन-स्पर्श के लिये दडल रवि शशि लां जाना,

खा पचेत से चोट, जलधि तटमें गिर जाना ।

काम, क्रोध, मद, लोभ आदि से पोड़ित होना,

चिंताओं का भार व्यर्थ जीवन-भर ढोना ।

बन्य व्यक्ति के लिये कर्मों कोई न करेगा ।

जब लौं उससे स्वार्थ स्वयं उसका न करेगा ।

नौर, हमें फर विवश पड़ाता है यदि हमको ।

निज विनोदके लिये सताता है यदि हमको ।

अत्याचार-निन्दित ! उसे फिर राजस कदिये !

परमपिता कह उते स्मरण क्यों करते रहिये ?

स्वेच्छा बिना कदापि यहाँ हम ना न सके हैं ।

बिना किसी सौंदर्य कदापि लुभा न सके हैं ।

मुक्तो पड़ता ज्ञान सुखों के पीछे फिरना ।

उनका पा आभास और दुःखों में गिरना ।

विधवाओं का रुदन ! विफलकर आहें भरना ।

माता का निजपुत्र के लिये कंदन करना ।

निज विरह से निज-मण्डली का दुख पाना ।

देश-बन्धुओं का विषाग में अध्रु बहाना !

स्वेच्छा के अनुकूल क्रियायें हं ये सारे ।

इन्से बनती सरस विरस जीवन की क्यारो !



दिन-रात्रि रात का बाना, दोहन का कुन्डलाना,  
 फूलों का झड़ना, कटियों का बसना हो गिर जाना ।  
 लथाम का विधवा हो जाना, हाथ को उगड़ देना,  
 पुत्रवती का पुत्र-दिहोना हठकर सब सुख येना ।  
 स्वर्गों के सौन्दर्य के द्वार हनने स्वयं बनाया,  
 उनको निम्नावस्थाओं में सुख-दुःख स्वयं बनाया ।  
 क्षिप्र दुःख का जाधिर देव इन क्यों घराबों !  
 क्यों व स्तेय को शक्ति के सनत मोह बनावें !  
 नहीं, दुःख जब निठे घर करना हो चढ़ि,  
 करने में होकर बरछ बनाकुछ हो धरि ।  
 जब बयोरता-घटा घबो क्षिप्र घराबों,  
 बन्धवार में नागे शनिनी दिखलावों ।  
 जब होगा व्यक्त, दुःख रात वनों निढेवा,  
 तंतेन परबत् नाधुरी-कुसुम छिडेवा ।  
 ओ विरचितो ! विरहव्यथे जलनन, स्याते,  
 छेकर रने पङ्क दृश्य में नेरे नाथे ।  
 सनत' लो संहर हनारे तुडु दैव का !  
 लो पूर्ण अक्षर हनारे सब वंनर का !  
 वन्देवं का विह-श्रया में हने उलास !  
 पूर रिगन्ध के विषय में हने ल्लास ।









( २ )

मृतक समाज अशक विवर बाँधों को मोचे;  
गिरता हुआ बिलोक गर्भ से हम को नीचे;  
करके जितने कृपा हमें अबलम्ब दिया था;  
लेकर अपने अतुल बहु में बाग किया था।  
जो जननी का भी सर्वदा,  
धो पालन करती रही।  
तू क्यों न हमारी पूज्य हो,  
मातृभूमि माता नदी ॥

( ३ )

जिसकी रज में लोट लोटकर बड़े हुए;  
घुटनों के बल सरक-सरक कर खड़े हुए है।  
परमहंस-सम वाज्यकाल में सब सुख पाये;  
जिसके कारण 'धूठमरे होरे' कहलाये।  
हम खेले कूड़े हर्ष-युत,  
जिसको प्यारी गोद में।  
हे मातृभूमि ! तुझको निरख,  
मग्न क्यों न हों मोद में ?!

( ४ )

पालन पोषण और जन्म का कारण तू ही;  
वक्षःस्थल पर हमें कर रही धारण तू ही।  
लक्ष्मण-प्रासाद और ये मडल हमारे;  
बने हुए है बड़े ! तुझो से तुझ पर सारे।



हम मातृभूमि ! देवल तुझे,  
शीश झुका सफते बहो !

( १३ )

कारण वश जय शोकदाह से हम दहते हैं,  
तब तुझ पर ही लोट-लोटकर दुःख सड़ते हैं ।  
पाखंडी भी धूल चढ़ाकर तनु में तेरी,  
फड़लाते हैं साधु, नहीं लगती है बेरी ।  
इस तेरी हो शुचि धूलि में,  
मातृ भूमि ! वह शक्ति है ।  
जो क्रूरों के भी चित्त में,  
उपजा सकती भक्ति है ॥

( १४ )

कोई व्यक्ति विशेष नहीं तेरा अपना है,  
जो यह समझे हाथ ! देखता वह सपना है ।  
तुझको सारे जीव एक से हो प्यारे हैं,  
फर्मों के फल-मात्र यहाँ न्यारे न्यारे हैं ।  
हे मातृभूमि ! तेरे निष्कट,  
सब का सम सम्बन्ध है,  
जो भेद मानता वह बहो !  
लोचनयुत भी अन्ध है ।

( १५ )

जिस पृथिवी में मिले हमारे पूर्वज प्यारे,  
उससे है भगवान ! फर्मो हम रहें न न्यारे ।  
लोट लोट कर वही हृदय को शान्त करेंगे,  
उसमें मिलते समय मृत्यु से नहीं डरेंगे !



ओ उठो शुको शुक्र-बाल सर्व, वे टगे विचारने फिर सगर्व ।  
 आ गये लौटकर नब बिड़ङ्ग, सब गाते शुक्र-यश बैठ-सङ्ग ।  
 अय अन्न भूनि-गौख-निधान, अय रूप त्याग के मूर्तिमान ।  
 अय धर्म-परायण महाधीर, प्रणयोर अलौकिक अपति कीर ॥

—गोविन्ददास

—

## प्यारा हिन्दुस्तान

नेरु, द्रोण, दिनगिरि, विन्ध्यावध,  
 गंगा, अनुना, कच्छ, मरुस्थल,  
 सागर, सरिता, खेत समंगल,  
 करते चिद बखान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

बन, उपवन, फल फूल मनोहर,  
 ललित लता लिपटी ठरवर पर,  
 हरसिद्ध सडित समोद सरोवर,  
 करे सदा सुबखान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥

हपि. मुनि. वीर ब्रह्म ब्रह्मकारी,  
 साधु. सती सम्राट, सुधारो,  
 सिन्धु. सुकवि, गुप्तो. नर-नारी,  
 सब का अन्नस्थान ।

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ॥



पड़े सड़ रहे हैं मनमारे, खूब फते हैं बन्धन सारे ।  
नहीं तनिक भी हिलने पाते हैं यह कपट-कला-बल्लदलको ॥

सेवा तेरे चरण-कमल की ॥ १ ॥

फोई हठ-उत्साह रंक है, फोई निज धोदित सशंक है ।  
फोई पड़े प्रपंच-पंक में, छिः मानव-कुल के फलंक है ।  
फोई पिद्रोही मयंक है, क्या फोई ऐसे अशंक है ?  
करें विफट यलिदान शान्ति से लघु लालसा छोड़ प्रतिपलको ।

सेवा तेरे चरण कमल की ॥ २ ॥

जिनके डर निर्भय निश्चल हैं, मन चच फर्म एक निश्चल है ।  
पूर्ण तेजमय जर्जर तन पर केवल बल्लक बसन विमल है ॥  
और परम प्यारे निराल हैं, क्या उनके प्रयत्न निष्फल हैं ?  
होती है न्योछावर उन पर, सइसा ब्रह्म-सिद्धि छिति-तल की ।

सेवा तेरे चरण कमल की ॥ ३ ॥

—“एक राष्ट्रीय आत्मा”

## स्वदेश-प्रेम

( १ )

शीत फड़ाके की थी, करता था सी सी सारा संसार ।  
पाटा फटता था हाड़ों में मानों सुइयों की थी मार !  
ककरोछे पथरोछे पथ पर नङ्गे हो पावों था कौन !  
प्राणों की बलि देता किस पर ? सुना परन्तु बमो था मौन !  
हृदय-देश उद्दोलित होकर स्वयं हो उठा शब्द 'स्वदेश' ॥





इस प्रकार कंगाल बाडिका अपनी माँ घन-होना को—  
 दुखों को सुखतात्र आश्रयक दुखिनो को, इस दोना को—  
 सुन्दर पद्मानुपम-सज्जित देव चकित हो जातो है।  
 सब है या फेरल सरता है, रुद्धता है, रुठ जातो है ॥

पर सुन्दर लगती है, इच्छा पड़ होती है कर छे प्यार।  
 प्यारे चरणों पर पडि जाये, कर छे मनमरके मनुहार ॥  
 इच्छा प्रयत्न हुए, माता के पास दौड़कर जातो है।  
 पलों को संघातो उत्तरो मानुष्य पड़नातो है ॥

उसी भाँति आश्चर्य मोद-मय आज तुझे निरुक्तता है।  
 मन में उमड़ा हुआ भाव रस सुंदरक आ रुक जाता है ॥  
 प्रेमान्मत्ता होकर तेरे पाँव दौड़ जातो हूँ मैं।  
 तुझे सजाने का संशयने में हो कुछ पातो हूँ मैं ॥

तेरी इस महानता में क्या होगा नृप्य सजाने का।  
 तेरी मध्य मूर्ति को नकली आभूषण पड़ाने का ॥  
 किन्तु क्या हुआ माता ! मैं जो तो हूँ तेरी हो सन्तान।  
 इसमें हो सन्तोष तुझे है, इसमें हो आनन्द महान ॥  
 मुझ को एक-एक की पन तू तोस कोटि की आज हुई।  
 हुई महान सभी, भाषाओं को तूही सिरताऊ हुई ॥  
 मेरे लिए बड़े गौरव की जोर गव को है यह बात।  
 तेरे द्वारा हो होवेगा भारत में स्वातन्त्र्य-रमात ॥

अपने प्रथम पर मर मिट जाता यह जीवन तेरा होगा।  
 जगती के पीरो-द्वारा शुभ पद-चन्दन तेरा होगा ॥







## जन्योक्ति-सप्तक

मैना तू वन-वाल्मीकी, परी पोंडरे जान,  
 जान दैव-गति-ठाहि मैं रहे शांत सुख मान ।  
 रहे शान्त सुख मान यान सोनठ ते अपनी,  
 सख पक्षित-सरदार तोहि कवि-कोविद बनो ।  
 कहैं 'मोरी' करि नित्य, सेटकी नधुरे बैना ।  
 तौ मो तुम्हको धन्य, यो तू अजह मैना ॥१०॥  
 ठोठा तू पछड़ा गया; जर या निपट नदान,  
 बड़ा हुना कुछ पड़ दिया तौ मो खा अज्ञान ।  
 तौ मो खा अज्ञान शान का नर्म न पाया ।  
 अंजन पर ये हाथ लौर निद्र घर सिखाया ।  
 कहैं 'मोरी' समुन्नाय हाथ ! तू जर लौं छोटा ।  
 चोटा हो नहि जाय, दिया परा पड़ छे छोटा ॥११॥  
 बिलो निद्र पति-प्राप्ति तौ मो प्यास नेह,  
 पातो है चिडका ननक, उलछे नेह न नेह ।  
 उलछे नेह न नेह देह पर पखी हनका,  
 या पाकर यो दुष कनार पर लो घनका ।  
 कहैं 'मोरी' समुन्नाय, पड़े तू यह दिखी ।  
 नमस्कारानो बाट न दूटे तुम्हछे दिखी ॥१२॥  
 बगला रैठा ध्यान में प्राक डल छे होर,  
 नाने नरकी लख हरे ननका ननक शेर ।  
 ननकर ननक शेर नर लख देखी ननक  
 कहैं 'मोरी' प्रति योग समूहो लौर निद्र



## अप्यक्त प्रेम

जैसे सूर्य-स्नेह के प्यासे पंकज का डर उज्जरक होय ।  
 पाते ही आँखों के धिरे के धिरे उठता है सब दुख धोय ।  
 फाँव कुमुदिनो फरव फौजुदी निहते ही प्रकृष्टा जाती ।  
 कुमुद-पांशु के विकास पर विद्वित हो मुख सरसाती ॥  
 लोतक मंद सुगंध पवन का प्रातः सनय पादर संधार ।  
 रँधुरी बली, सुमन मुकुलित फल देता है सुगंधि-विस्तार ॥  
 पनधेवन विद्वतना सदय में दृग-पटाक्ष को नारें खीर ।  
 भाव प्रभाव गजायें न पुन धन प्रवृत्त प्रेम को डोर ॥  
 द्रव शरीर के पर्वत तुन के रिक, कटुर, नखे सब मोर ।  
 कषणकषण चक्कै निकलते, उगे उपा के छतरी छोर ॥  
 अमर स्थान शीतली दमाता, पलक कुलों के द्विज जाता ।  
 संसृष्ट ही जाता है मधुमिष्ट वे नेत्रमिष्ट मुख पाता ॥  
 ईश्वर लक्ष्मी में मल्लोत्पल ही, लोहा है बरौ बरन बरौ ।  
 बरौ व बरौ बरौ ही पृष्ठ हल अप्यक्त प्रेम का डोर ॥  
 भाव देव लक्ष्मीन विरहतर निष्कलत्र ही का-म-विभव ।  
 प्रेम अंतरका रही रघु है कनक छत्रन हाँसे लव ॥

• • • • •  
 यह विषय सत्य है माया मल्लोत्पल बरौ है  
 मधुमिष्ट वे मधुमिष्ट वे मल्लोत्पल सत्य रिक्त है  
 का-म अंतर का-म है लक्ष्मी का लक्ष्मी का विद्वत-मुखा  
 लक्ष्मी विद्वत का विद्वत है लक्ष्मी है मल्लोत्पल मुख  
 लक्ष्मी लक्ष्मी लक्ष्मी विद्वत का लक्ष्मी का लक्ष्मी  
 लक्ष्मी लक्ष्मी लक्ष्मी विद्वत है लक्ष्मी लक्ष्मी लक्ष्मी





जिनकी मृदु मुसकानि सरलता विरहित गालों की लाली ।  
 देख देख सुन्दर फूलों की खता है अग का माली ॥  
 बघी हुई मिट्टी की जिनने बच तक नहीं पसारा है ।  
 जिनकी हाथों से पैरों का बघिड़ जंगूठा प्यारा है ॥  
 भावो भारत-गौरव-गढ़ की सुदृढ़ नाँव के जो पत्थर ।  
 आर्यदेव की दटल इमारत का बनना जिन पर निर ॥  
 उन्हीं अनूठे फानों की यह मेरी स्वरमय वादन-पुकार ।  
 पहुँचे आरलता की अड़ में जिसमें होय शक्ति-संचार ॥

—नाथव शुक्ल

## उन्माद

( १ )

अब नहीं जाकर किया तुमने हृदय में वास ,  
 हो लघोर स्वयं चला अब यह तुम्हारे पास ।  
 पर न तुमको पा सका की यद्वि बहुत बलाह,  
 टोट बाधा जन्त में होकर जगोय हवाय ॥

( २ )

दृष्टिगोचर हो न तुम फलत सभी नतिमान ,  
 सत्य हम नी क्यों न फिर यह बात डेते मान ;  
 टावनी की मूँदकर करने लगे हम व्यग्र ,  
 हाय, तो भी कुछ हमें न हुआ तुम्हारा नर ॥

( ३ )

चित्त देकर और तुम को एक दिन के कट  
 सो रहे थे हम पडे बैठे बाट के कट



## विविध विषय ]

जिनकी मृदु मुक्तकानि सरलता विश्ववित्र गालों की छा  
 देख देख सुन्दर घूटों को खचा है जग का नाव  
 बधो हुई मिटों को जिनने अब तक नहीं पसारा है  
 जिनको हाथों से पैरों का अधिक अंगूठा प्यारा है  
 भावों भाव-गौरव-गढ़ की सुदृढ़ नींव के जो पत्थर  
 आर्पदेश की दृढ श्वास्त का बनना जिन पर निराल  
 उन्हीं अनूठे खानों की पर नेरी स्वरनय जातन-पुकार  
 पहुँचे आरुलता का जड़ में जितने होय शक्ति-संचार ॥

—नामन मुख

## उन्माद

( १ )

जब नहीं जाकर दिया तुमने हृदय में बात ,  
 हो अधोर स्वयं बला वय वह तुम्हारे शत्रु ।  
 पर न तुम्हें पा सजा को पदवि बहुत बड़ा,  
 लोट जाया जन्म में होकर नवीन द्वाप ॥

( २ )

होमिगोवर हो न तुम खड़े बनो न विमान ,  
 सत्य इन नो क्यों न छि पड़ बात लेवे नाव ।  
 टावना का मृदुल घरने लगे इन ब्रान ,  
 हय, ना ना कुछ इनने न हुआ तुम्हारा ज्ञान ॥

( ३ )

चित्त दूर और सुर लं एक दिन की बात ,  
 ल रहे थे इन पडे बोटों बहुत ॥



શ્રેષ્ઠ કાર મહા શ્રેષ્ઠ મનો હવ મહા મહા મહા મહા,  
 હવ! હો મો નિઠ શ્રેષ્ઠ મુખા મુખા મુખા મુખા મુખા,  
 ( ૬ )

( ६ )  
 यदपि नरकं त्वं कुरुष्व भवति सदा  
 विष्णुना ललाटमग्रेऽङ्गुलिनिभम् ।  
 नरकं ब्रह्माणां ललाटेऽङ्गुलिनिभम्  
 नैवेद्यं दत्तं करोति नरको जलम् ॥

[illegible]

此

(13)

[illegible]

(२)

(२)

13

*[Faint handwritten notes at the bottom of the page, likely bleed-through from the reverse side.]*



बलिबाला से मुन तब सहसा—'जग है देवठ सज्जन-सज्जन'  
अपित कर देती मातृ को यह अपने सौजन्य का नर।

( ६ )

हिम-झल वन तारफ-पलकों से. उनह मोझियों से अदभुत,  
सुमनों के वधखुले दृगों में स्वप्न लुप्तते हैं जो दूर;  
उन्हें लहज लहज में चुन-चुन गूँथ उपा दिये में दूर,  
क्या अपने उर के विस्मय का तू ने कभी किया गहरा!

( १० )

विजय-जोड़ में चौक जवानन, विजय-चालिका पुटलिका-रत्न,  
जिन सुवर्ग-स्वप्नों को गाथा गा गाकर छुड़ा है दूर,  
सज्जति! कभी क्या सोचा तू ने तबजों के तन में सुवर्ण,  
दोष-शयन दोषों को चमका करते हैं जो नैन-ज्योतिः।  
—मुनिप्रदत्त —

जांतू !

हे मेरी बाँखों के जांतू ! हे इस जीवन के शिल्पिण !  
उलक पड़ी मत, रही अन्त तक, उनहें इस दुखिनाहने रत्न,  
हे करुणा के चिह्न ! अग्रे अनिडापा को मोख नर,  
मत छुटका हे दंगी हुई तुम पर ही मेरे गुन दूर,  
हृदय-वेदना के परिचायक ! निराधार है हे जागर !  
अन्तस्तक को धोनेवाले ! हे मेरे सुनुत उद्गार,  
हे मेरी अतल्ल्य भूलों के—मूर्तिमान सच्चे व्यक्त,  
शोखल करते रही सदा इस शब्द, हृदय का नौदर !



ANDU (DIE ELEPHANT)







